Date 6/5/20

समाजशास्त्र

B A Part II Paper II

Social Anthropology

From -
Dr Arun Kumar
Reader
Deptt of Sociology
Shershah college
Sasaram -

जनजातीय धर्म और जादू (Tribal Religion and Magic)

मानव, संसार की समस्त घटनाओ या सृष्टि के रहस्यो को नही समझ पाता। अपने जीवन के रोज के अनुभवो से वह यह सीखता है कि अनेक ऐसी घटनाएँ है जिन पर उसका कोई वश नही है। स्वभावत: ही उसमे यह धारणा पनपती है कि कोई ऐसा भी शक्ति है जो दिखाई तो नही देती परन्तु वह किसी भी मनुष्य से कही अधीक शक्तिशाली है। यह अलौकिक शक्ति है; इसे डरा-धमकाकर या ऐसे अन्य किसी उपाय से अपने वश मे नही किया जा सकता। इस शक्ति को अपने पक्ष मे लाने का एकमात्र उपाय इसके सम्मुख सिर झुकाकर पूजा, प्रार्थना या आराधना करना है, इस अलौकिक शक्ति से सम्बन्धित विश्वासो और क्रियाओ को ही धर्म कहते है।

इसके विपरीत, कुछ ऐसी शक्तियाँ भी है जो मनुष्य की अपनी शक्ति से अधिक शक्तिशाली है परन्तु इन पर कुछ निश्चित तरीके से अधिकार किया जा सकता है। इसलिए मानव इन शक्तियो के सामने झुकने के बजाय इनपर अपना अधिकार स्थापित करके अपने उद्देश्यो की पूर्ति करवाता है इसी को जादू कहते है।

धर्म (Religion)

धर्म की परिभाषा :- डॉ मुरकर्जी के मतानुसार - धर्म किसी न किसी प्रकार की अतिमानवीय (Super human) या अलौकिक (Supernatural) या समाजोपरि (Super social) शक्ति पर विश्वास है, जिसका आधार भय, श्रद्धा, भक्ति और पवित्रता की धारणा है और जिसकी अभिव्यक्ति प्रार्थना - पूजा और आराधना है। उपरोक्त परिभाषा आदिम और आधुनिक दोनो प्रकार के समाजो मे पाये जाने वाले धर्मो की एक सामान्य व्याख्या है। प्रत्येक धर्म का आधार किसी शक्ति पर विश्वास है और वह शक्ति मानव शक्ति से अवश्य ही श्रेष्ठ है।

आधुनिक मानव शास्त्र के प्रवर्तक श्री एडवर्ड टायलर के अनुसार धर्म आध्यात्मिक शक्ति पर विश्वास है।

सर जेम्स फ्रेजर के मतानुसार - धर्म प्रकृति मनुष्य से श्रेष्ठ है, धर्म का सम्बन्ध एक ऐसी शक्ति से होता है जो मानव शक्ति से श्रेष्ठ है। धर्म वह शक्ति है जो प्रकृति तथा मानव जीवन को निर्देशित तथा नियंत्रित करती है। यह शक्ति मनुष्य शक्ति से श्रेष्ठ है

धर्म की उत्पत्ति के सिद्धान्त - धर्म की उत्पत्ति कैसे हुई उसका प्रारम्भिक रूप क्या था, इस सम्बन्ध मे मानवशास्त्रियो ने अलग अलग विचार व्यक्त किए है। विकासवादी लेखको के अनुसार आधुनिक सभ्य समाज जनजातीय या आदिकालीन समाजो का ही क्रमिक विकसित रूप है। इस कारण धर्म की उत्पत्ति भी सर्वप्रथम जनजातीय समाजो से ही हुई है,

टायलर के मतानुसार धर्म की उत्पत्ति मे आत्माओ पर विश्वास ही सर्वप्रमुख है, परन्तु आत्माओ पर विश्वास आदिवासियो पर कैसे हुआ? इस प्रश्न के उत्तर मे श्री टायलर का कथन है कि आत्माओ पर विश्वास आदिवासियो के दैनिक जीवन से सम्बन्धित दो प्रकार से उत्पन्न हुआ (अ) मृत्यु और (ब) स्वप्न से। एक जीवित और एक मृत व्यक्ति के बीच पाए जाने वाले भेदो को देखकर आदिम मनुष्य के मस्तिष्क मे यह बात आई कि जीवित व्यक्ति के शरीर के अन्दर अवश्य ही कोई न कोई ऐसी

चीज या शक्ति रहती है जिसके ~~बल पर~~ चले जाने पर अर्थात शरीर से निकल जाने पर शरीर क्रियाहीन हो जाता है। उस अवस्था मे मनुष्य न बोल पाता है, न खा सकता है, न चल सकता है और न ही कोई कार्य कर सकता है। इसका उत्तर स्वप्न तथा अन्य अनुभव ने दिया मनुष्य अपनी आवाज की गूँज सुनता था, अपनी परछाई देखता था और स्वप्न मे अनेक प्रकार के कार्य करता था अपने को और दूसरे अनेक जीवित व मृत व्यक्तियो को उस स्वप्न में देखता भी था। शरीर से सम्बन्धित इस चीजो को ही मनुष्य ने आत्मा का नाम दिया, जो उसके उपरोक्त अनुभवो के अनुसार 'एक पतली निराकार मानव प्रतिमूर्ति आकृति मे कोहरा चलचित्र या छाया की भाँति है।

फिर भी इस सम्बन्ध मे मनुष्य को एक-शंका बनी ही रही और वह यह कि वह सोते समय भी तो मनुष्य मृत-तुल्य होता है पर स्वपनो मे कोई चीज या शक्ति शरीर से निकलकर विभिन्न स्थानो मे जाती है अनेक प्रकार का कार्य करती है और अनेक जीवित एवम् मृत व्यक्तियो से मिलती है और अन्त मे अपनी इच्छानुसार फिर लौट आती है और मनुष्य नीद टूटने पर फिर पूर्ववत हो जाता है, अगर आत्मा अमर न होती तो उसे फिर से देखना कैसे सम्भव होता।

प्रो टायलर के अनुसार - आदिम मानव मे यह विश्वास है कि ये आत्माएँ मनुष्य के नियन्त्रण के बाहर है साथ ही यह माना जाता है कि ये आत्माएं मनुष्यो से सम्बन्ध बनाए रखती है। मनुष्य के अच्छे बुरे कार्यो से इन आत्माओ को दुख और सुख से होता है। इन आत्माओ को प्रसन्न रखने से मनुष्य को लाभ और इसके अप्रसन्न होने पर मनुष्य को नुकसान हो सकता है इसलिए ये हमारा अनिष्ट न करे। इस विश्वास को लेकर आदिम मनुष्यो ने पितरो की विनती आरम्भ की, और वही आगे ~~उपरोक्त~~ चलकर धर्म के रूप मे विकसित हुई।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर आत्मवाद की निम्न विशेषताए उल्लेखनीय है -

(1) आत्मवाद का मूल आधार आत्माओ के अस्तित्व मे विश्वास है।

(2) इन आत्माओ को दो मुख्य श्रेणियो मे बाटा गया है, - एक तो स्वतत्र आत्मा, जिसका अस्तित्व शरीर नष्ट हो जाने के बाद समाप्त हो जाता है। और दूसरा शरीर आत्मा को मनुष्य की मृत्यु या शरीर नष्ट हो जाने के बाद भी जीवित रहती है।

3 ये आत्माए इस भौतिक ससार की सब घटनाओ को तथा मनुष्यो के वर्तमान तथा पारलौकिक जीवन को

प्रभावित या नियन्त्रित करती है।

4 उपरोक्त विश्वास अपने आप अनिवार्य और सक्रिय रूप से मनुष्य को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वह उन प्रभावशाली आत्माओं को प्रसन्न करने के लिए उनकी आराधना प्रार्थना या पूजा करे आत्माओं की पूजा ही धर्म का प्रारम्भिक रूप है।

समालोचना — सर्वश्री लैंग (Lang) मैरेट, कूपर, जेवन्स आदि विद्वानों ने श्री टायलर के सिद्धान्त की जो समालोचना की है जो निम्न प्रकार है।

श्री टायलर के सिद्धान्त की प्रमुख दुर्बलता यह है कि आपने आदिम समाजों को अत्यधिक दार्शनिक के रूप में मान लिया है।

श्री टायलर के सिद्धान्त से यह पता चलता है कि आदिम समाजों में धर्म का स्वरूप आत्माओं पर विश्वास और उसकी पूजा आराधना है। श्री टायलर ने अपने सिद्धान्त के माध्यम से यह विचार प्रस्तुत किया है कि जनजातियों में ऊँचे देवताओं की धारणा नहीं होता,

श्री मैरेट का कथन है कि टायलर ने अपने सिद्धान्त में केवल आत्मा पर विश्वास का ही उल्लेख किया है परन्तु जनजातियों के जीवन का गहन अध्ययन करने से यह ज्ञात होता है कि जनजातीय लोग इससे ऐसी शक्तियों में भी विश्वास करते हैं जो आत्मा की शक्ति से भिन्न हैं। इसलिए केवल आत्मा की धारणा को ही जनजातीय धर्म का आधार मानना उचित न होगा।

धर्म का सामाजिक सिद्धान्त :— श्री दुर्खीम ने अपनी पुस्तक The Elementry Forms of Religious 'Life' में धर्म की प्रकृति, उत्पत्ति, के कारण, प्रभाव आदि के विषय में अत्यधिक विस्तृत तथा सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत की है। अपने धर्म सम्बन्धी सिद्धान्त के द्वारा आपने यह प्रमाणित करने का प्रयत्न किया है कि धर्म सम्पूर्ण रूप से एक सामाजिक तथ्य या सामाजिक घटना है और इस अर्थ में कि नैतिक रूप से सामूहिक चेतना का प्रतीक ही धर्म है।

समाज ही वास्तविक देवता है।—

अपने धर्म के सामाजिक सिद्धान्त को प्रस्तुत करते हुए दुर्खीम ने धर्म सम्बन्धी अब तक के सभी सिद्धान्तों को खण्डन किया है, उनका कहना है कि धर्म इतनी सरल घटना नहीं है कि इसकी उत्पत्ति परछाईं, स्वपन, प्रतिध्वनि मृत्यु आदि कुछ सीमित तथा व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर सम्भव है, प्रत्येक धर्म का कोई 'वास्तविक' आधार होता है

अतः स्पष्ट है कि धर्म का सम्बन्ध किसी व्यक्ति से नही बल्कि उसके सामूहिक जीवन से है। यही पर धर्म और जादू मे अन्तर स्पष्ट हो जाता है। जादू मे भी धर्म की भांति अनेक विश्वास संस्कार आदि होते है, फिर भी मूल रूप मे जादू वैयक्तिक होता है। जादू का सम्बन्ध व्यक्ति विशेष से होता है इसके विपरीत धर्म का सम्बन्ध किसी व्यक्ति विशेष से नही होता है। इसका आधार स्वयं समाज है। धर्म पवित्र वस्तुओं से सम्बन्धित, विश्वासो और आचरणो की वह समग्र व्यवस्था है जो इनपर विश्वास करने वालो को एक नैतिक समुदाय मे संयुक्त करती है"

श्री अलेक्जेन्डर गोल्डनवीजर तथा अन्य विद्वानो ने श्री दुर्खीम के उपरोक्त सिद्धान्त की समालोचना की है,

(1) श्री दुर्खीम का यह कथन कि टोटमवाद धर्म का सर्वप्रमुख तथा सर्वप्रथम आधार है यह कथन गलत है। विभिन्न जनजातीय समाजो का अध्ययन इस बात की पुष्टि नही करता आदिवासी समाजो मे धर्म और टोटम अपना-अलग पृथक् अस्तित्व रखते है।

केवल ~~धर्म की उत्पत्ति मे सामाजिक~~ पवित्र और साधारण इन दोनो धारणाओ के आधार पर ही धर्म को समझा या समझाया नही जा सकता। इस प्रकार के भेद भाव आदिम समाजो मे स्पष्ट हो सकता है परन्तु आधुनिक समाजो मे इन दोनो के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना कठीन है।

प्रत्येक विद्वान ने अपने निजी तरीके से धर्म की उत्पत्ति की व्याख्या की है। पर उनमे से किसी भी सिद्धान्त को न तो सम्पूर्ण असत्य और न ही धर्म की ~~उत्~~ उत्पत्ति का अन्तिम कारण मानना चाहिए क्योकि प्रत्येक समाज की सामाजिक व प्राकृतिक और साथ ही सांस्कृतिक पृष्ठभूमि मे अन्तर होने के कारण धर्म की उत्पत्ति भी अलग-अलग समाज मे अलग अलग कारणो से हुई है

From -
Dr Arun Kumar
Reader
Deptt of Sociology
Shershah college
Sasaram, Rohtas

Scanned by TapScanner